हिन्दी कथा साहित्य में परिवर्तन की विविध दिशाएँ

जगपाल सिंह यादव,

ज्वालामुखी मंदिर के पास
रानीगंज मोहल्ला पन्ना–जिला,पन्ना (म.प्र.)

किसी भी समाज के परिवेश की अभिव्यक्ति का शसक्त माध्यम साहित्य होता है। साहित्य की अनेक विधाएँ हैं जो आज से कई सौ वर्ष पहले से ही साहित्य को आगे ले जाने का कार्य कर रही है। हिन्दी कथा साहित्य का वर्तमान रूप एक सत्त गतिशील, ऐतिहासिक परम्परा का ही विकसित रूप है। लोक रंजन एवं लोक कल्याण के लिए कथा कहने की प्रवृत्ति अनादिकाल से विद्यमान रही है, किन्तु साहित्य के रूप में इसकी अवधारणा उन्नीसवीं सदी से मानी जाती है। धीरे–धीरे साहित्य का इतिहास आगे बढ़ता गया और प्रेमचन्द जैसे प्रतिभाशाली कथाकार का स्पर्श पाकर हिन्दी साहित्य में अपनी पूर्णता की ओर अग्रसर हो गया। इसके उपरान्त स्वाधीनता के काल से लेकर अब तक कथा साहित्य भारतीय जन–जीवन को व्यक्तिगत–सामूहिक दोनों रूपों में समाजशास्त्रीय दृष्टि से पहचान दिलाकर उसे अनेक कोणों से प्रस्तुत करता रहा। साहित्यिक, समाजशास्त्रीय अध्ययन का उद्देश्य सामाजिक यथार्थ का उद्घाटन है। किसी भी देश, काल या जाति के इतिहास को देखें, उसकी महान कृतियाँ तत्कालीन समाज की समस्याओं से स्पष्ट जूझती दिखायी देगी।

वर्तमान समय जीवन जीने और भोगने के बजाय समझने और समझाने का विषय बन चुका है और अनुभूति का स्थान उतरोत्तर बौद्धिकता ने ले लिया है, ऐसी स्थिति में हिन्दी उपन्यासों ने नया शिल्प, नई संवेदनशीलता युग–बोध नई अवधारणाओं को उभारकर नई परिकल्पना दी है। व्यक्ति अपनें और समाज के संदर्भ में कहाँ है? इसकी खोज हो रही है। परिवेश को पहचान कर व्यक्ति और उसकी नियति को पहचानने की कोशिश की जा रही है। आस्था और अनास्था के बीच मानव में संग्राम छिड़ा है। विघटित मूल्यों के स्थान पर वह नये मूल्य स्थापित करना चाह रहा है। अंतः विरोधों को मिटा कर सत्य को खोजने की ओर अग्रसर है। परिवेश और संदर्भ तथा बदलती मनःस्थितियों पर बल दे रहा है। उपरोक्त सभी बहुस्तरीय जीवन को टटोलने और उसकी परते खोलने की दृष्टि से हिन्दी उपन्यासों में प्रयास होता रहा है।

कथा साहित्य में परिवर्तन की विविध दिशाओं में यदि आधुनिकता बोध की चुनौती को विभिन्न स्तरों पर स्वीकारने में प्रमुख उपन्यासों की चर्चा की जाए तो स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् इन प्रमुख उपन्यासों में अभिव्यक्त आधुनिकता बोध इस प्रकार हैः–

अज्ञेय ने प्रयोगों के माध्यम से 'नदी के द्वीप' 1951 में मानवीय अन्तर्मन की अन्तर्मुखी वृत्तियों का विश्लेषण कथानायक डॉ. भुवन के द्वारा प्रस्तुत किया है। इस उपन्यास में आधुनिक नारी के यौन तृप्ति, प्रेम विवाह आदि अन्तर्मन की गहनतम प्रवृत्तियों एवं भावनाओं का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया गया है, जो आधुनिकता बोध को विश्लेषित करता है।

नागार्जुन ने उपन्यास बलचनमा (1952) के माध्यम से नायक बलचनमा के अनैतिक जीवन जीने वाले जागीरदारों के चक्र में फंसकर अनवरत रूप से संघर्षमय जीवन को दर्शाया है। ''प्रेमचन्द

के गोदान के होरी की भाँति बलचनमा सम्पूर्ण भारतीय कृषक जीवन का प्रतिनिधित्व करता है। बलचनमा आधा खेत मजदूर और आधा किसान है।'' 'बूंद और समुद्र' (1956) में अमृतलाल नागर ने इस उपन्यास की मौलिकता में दर्शाया है कि व्यक्ति को स्वतंत्र चेतना के साथ संघर्ष के मार्ग पर चलना चाहिए न कि समष्टिगत सम्बन्धों और विधानों के अनुकूल चलता हुआ मृत्योन्मुखी हो जाए।

यशपाल ने 'झूठा सच' (1960) के माध्यम से जीवन की पूर्णता को केन्द्रित करते हुए इस उपन्यास का सृजन किया। उच्च एवं निम्न मध्यमवर्गीय समाज की अव्यवस्था और बदलते हुए सामाजिक मूल्यों का समर्थ ढंग से चित्रण किया है।

समीक्षक एवं कथाकार राजेन्द्र यादव ने 'उखड़े हुए लोग' (1956) में सामाजिक संदर्भ के परिपेक्ष्य में खोखले आदर्श की जड़ों को उखाड़ कर यर्थाथता से अवगत कराया है। आज के जनप्रतिनिधि चरित्रहीन जीवन भोगते हुए झूठे आदर्श का सम्मोहन जाल फेंकते हैं। लेखक ने इस यर्थाथ् का उद्घाटन कर ऐसे लोगों को उखाड़ने का यत्न किया है।

नरेश मेहता ने 'यह पथ बंधु था' (1962) में व्यक्ति की विवशता एवं उसके प्रति सामाजिक दृष्टिकोण का विश्लेषण किया है। 'श्रीधर सरो' एक आदर्शवादी संस्कार सम्पन्न व्यक्ति जिन मूल्यों को लेकर स्वतंत्रता संग्राम में संघर्ष करता है वे अन्त में निरर्थक प्रमाणित होते है। उसका पूरा परिवार टूट जाता है, वह अपने को व्यर्थ अनुभव करता है।

महेन्द्र भल्ला ने 'एक पति के नोट्स' (1967) में सेक्स के माध्यम से आज के जीवन की ऊब और निरर्थकता को प्रकट किया है। उपन्यास में विदेश में निवासरत भारतीयों की संत्रस्त, उपेक्षित और घुटनभरी जिन्दगी का सफल चित्रण किया है।

'रूकोगी नहीं राधिका' (1967) उषा प्रियंवदा ने इस उपन्यास में आधुनिकता, अकेलापन, संत्रास, ऊब, घुटन अजनवीपन आदि तत्वों का वर्णन किया है। राधिका अश्रय और मनीष के बीच अनिश्चय की स्थिति में भटकती है।

मोहन राकेश ने 'न आने वाला कल' में पहाड़ी प्रदेश के एक मिशनरी स्कूल में काम करने वाले हिन्दी के प्राध्यापक 'नरूला' के त्यागपत्र देने की घटना को केन्द्र में रखकर स्कूल के वातावरण, पति–पत्नी के सम्बन्धों में तनाव और घुटन का चित्रण है। 'नरूला' के त्यागपत्र से सब अपने भविष्य (न आने वाला कल) के प्रति सशंक हो जाते हैं। यह भविष्य की आशंका और संत्रास ही उपन्यास की अन्तर्वस्तु है।

'बेघर' (1971) में ममता कालिया ने एक लड़की के कुंवारेपन को कसौटी पर कसा है। तथा संस्कारबद्ध पुरूष मन पर गहरी चोट की है। आपने यह दिखाना चाहा है कि नारी की पवित्रता की कसौटी उसकी मानसिक एकात्मकता और सम्पूर्णता है।

'सफेद मेमने' (1971) मणि मधुकर ने राजस्थान के एक छोटे से गाँव नेगिया में आधुनिक जीवन की ऊब, अजनवीपन, संत्रास, व्यर्थबोधता आदि को संकेतित किया है। रेगिस्तान का जीवन रस के सूख जाने का प्रतीक है।

'आपका बंटी' (1971) में मन्नू भण्डारी ने आज के मध्य वर्गीय समाज में तलाक की समस्या के अनेक आनुशंगिक समस्याओं का वर्णन किया है। इसमें सबसे जटिल समस्या तलाकशुदा दम्पत्तियों के बच्चों की है। मन्नू भण्डारी ने बंटी की मानसिकता का सूक्ष्म विश्लेषण उसकी समस्या, उसका दर्द, उसका अकेलापन, उसका बिखराव आदि को आधुनिक संदर्भों में व्यक्त किया है।

बदी उज्जमाँ का फैंटेशी शैली में लिखा 'एक चूहे की मौत' (1971) एक प्रतीकात्मक उपन्यास है। चूहा–खाना आज की संवेदना रहित दुनिया का प्रतीक है। आज की व्यवस्था के पोषक कार्यालयों के हास्यास्पद नियमों, उपनियमों, कर्मचारियों, अधिकारियों की प्रवृत्तियों तथा तथास्थिति बनाये रखने के उनके अजीबोगरीब तरीकों पर गहरा व्यंग्य करता है।

कृष्णा सोबती ने 'सूरजमुखी अंधेरे में' (1972) परम्परा से हटकर एक साहसिक कदम उठासा है। इस उपन्यास में नारी जीवन की एक मनोवैज्ञानिक समस्या को उभारा गया है। कृष्णा सोबती ने 'मित्रो मरजानी' में भी आधुनिक नारी मित्रों की यौन समस्या को व्यक्त किया है।

नवें दशक के उपन्यासों में आधुनिक जीवन की खोज की गई है। उसमें सूक्ष्मता और गहराई के साथ विस्तार है। मोहभंग की स्थिति, अनुभूति, जीवन की दुरूहता उससे उभरने के प्रयास में आधुनिकता बोध के विभिन्न संदर्भ व्यक्त हुए हैं इनमें प्रमुख है–निरूपमा सोबती का 'दहकन के पार' (1982) ई. में हिन्दू लड़की तुषार और मुसलमान लड़के 'असलम' के बीच प्रेम का चित्रण करते हुए लेखिका ने धार्मिक साम्प्रदायिक रूढ़ियों पर प्रहार किया है। जीवन संघर्ष के अनेक बिन्दुओं को उभारते हुए भविष्य के प्रति आशावादी स्वर मुखरित किया है।

मृणाल पाण्डे का उपन्यास 'पटरंग पुराण' (1983) ई. विशेष रूप से चर्चित हुआ है। इसमें 'पटरंग पुर' के बसने और अनेक परिवर्तनों के बीच से प्रस्तुत गुजरते हुए उसमें आज तक होने वाले बदलाव को प्रभावी रूप से प्रस्तुत किया है। चन्द्रकान्ता का अपने–अपने कोणार्क (1995) में इस सच को उजागर किया है कि नारी जड़ मूल्यों की पाषाण शिला नहीं, प्यार और उजास से बना यह 'कोणार्क' मधुर ध्वनि के समान है।

नासिरा शर्मा का 'ठीकरे की मंगनी' (1989) वैचारिक संघर्ष की अभिव्यक्ति है। प्रभा खेतान का 'छिन्न मस्ता' (1993), पीली आँधी (1996) आदि में आधुनिकता के दवाब से उदीयमान नारी चेतना का सूक्ष्म विष्लेषण किया गया है।

आधुनिकता बोध बिडंबना और विसंगति को चित्रित करते हुए प्रमुख उपन्यासों में सुरेन्द्र वर्मा का 'मुझे चाँद चाहिए' (1993) मृदुला गर्ग का 'कठगुलाब' (1996) विनोद कुमार शुक्ल का 'दीवार में एक खिड़की रहती थी' (1997) चित्रा मृद्गल का ऑवा (1999) कृष्ण बलदेव बैद का 'नर–नारी' (1996) मैत्रेयी पुष्पा का 'चाक' (1997) झूला नट (1999) गीतांजली श्री का तिरोहित (2001) मधु कांकरिया का 'पत्ताखोर' (2005) आदि प्रमुख उपन्यासों में सड़ी–गली प्रथाओं, रूढ़ियों के विरोध के अंतर्गत आधुनिकता बोध के विभिन्न स्तर व्यक्त हुए है।

हिन्दी कथा साहित्य के दूसरे पहलू अर्थात हिन्दी कहानी की बात करें तो वर्तमान हिन्दी कहानी ने विस्तृत आधुनिक जीवन–परिवेश को उजागर किया है साथ ही उसके विविध पक्षों के उभरे–दबे कोनों को समाज–शास्त्रीय ढंग से उजागर करने का प्रयत्न भी किया। हिन्दी कहानी में जीवन की तल्खियाँ, पग–पग पर अनुभव होने वाले पराजय बोध, असुरक्षा, आर्थिक तंगी से उपजे हीनता बोध, संस्थाओं में होने वाले भ्रष्टाचार, नैतिक रूढ़ियों एवं मान्यताओं में विघटन, घर और बाहर संघर्षरत आधुनिक नारी पर होने वाले अत्याचार, धर्म की आड़ में चल रहे दुराचरण और भ्रष्ट राजनीतिक व नौकरशाही का रूप आदि जैसे मुख्य विषय बने। ये कहानियाँ अब तक के अनछुए प्रसंगों को उठाकर हमें करीबी जिन्दगी से रूबरू कराती हैं। इन प्रमुख कहानी कारों में बलदेव वैद्य, भीमसेन त्यागी, हिमांशु जोशी, मन्नू भण्डारी, निरूपमा सेवती, मंजुल भगत आदि प्रमुख हैं।

आधुनिकता बोध के कारण वर्तमान समाज के व्यक्तिगत और सामाजिक सम्बन्ध अर्थ की

बुनियाद पर टिके हुए हैं। परम्परा से विच्छिन्न होकर तथा सभी प्राचीन मानव सम्बन्धों के मोहपाश से मुक्त होकर आज का व्यक्ति अधिकाधिक आत्मकेन्द्रित होता जा रहा है। यहाँ तक कि पिता–पुत्र, भाई–बहन जैसे निकट सम्बन्धो में भी अजनवीपन समाता जा रहा है। भारतीय युवक परम्परागत मान्यताओं और रूढ़ नैतिकता के प्रति विद्रोह करना शुरू किया। वे परम्परागत मान्यताओं के बन्धन में जकड़े रहना नही चाहते। नैतिक प्रतिमान, जीवन मूल्यों में परिवर्तन के कारण सम्बन्धों में बदलाव आना सहज है। आज संयुक्त परिवार बड़ी तेजी से बिखरता जा रहा है। मन्नू भण्डारी की 'शायद' कहानी का पात्र कहता है– "अनायास ही रंजू की याद आई कि जहाज वालों को तो शादी ही नहीं करनी चाहिए। रात–दिन मशीनों से सिर फोड़ो, पैसा मिले तो घरवालों की हाजिरी में।[1]

स्वतन्त्रता के बाद संयुक्त परिवार का विघटन तेजी से हुआ है। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से परिवार में किसी भी प्रकार की अव्यवस्था ही परिवारिक विघटन है।' नैतिक प्रतिमानों एवं जीवन मूल्यों में परिवर्तन के कारण सम्बन्धों में बदलाव आना स्वाभाविक है। व्यक्तिवादिता के प्रसार तथा औद्योगीकरण के विकास के साथ पारिवारिक मूल्यों में विघटन शुरू हो गया। युवा पीढ़ी स्वभावतः पहले की अपेक्षा अधिक स्वतन्त्रता की मांग करने लगी, क्योंकि उनके समक्ष परिवर्तनशील समाज और मूल्यों के मध्य अपने अस्तित्व का प्रश्न मुख्य हो गया है। युवा–पीढ़ी इस स्थिति के लिए तैयार नहीं है कि पारिवारिक मूल्यों के चलते वह अपने व्यक्तित्व का निर्माण न कर पाये। परिणामतः परिवार का पुराना ढाँचा टूटने लगा। आधुनिक जीवन के पारिवारिक सम्बन्धों के परिवर्तन ज्ञानरंजन की पिता, शेष, मोहन राकेश का क्वार्टर, राजेन्द्र यादव की छोटे–छोटे ताजमहल, हरिप्रकाश की वापसी आदि कहानियों से स्पष्ट हो जाता है।

आजादी के बाद भारतीय नारी के जीवन में पर्याप्त परिवर्तन आया। एक ओर जहाँ परिवार का परम्परागत स्वरूप टूटा, वहीं दूसरी ओर स्त्री स्वतन्त्रता के कारण दाम्पत्य जीवन में भी विघटन की प्रक्रिया प्रबल होती जा रही है, यह चिन्तनीय विषय है। आज नारी स्वतन्त्र जीवन जीना चाहती है। वह वर्जनामुक्त हो अपना रास्ता तलाशना चाहती है, परन्तु आज भी पुरुष अपने पूर्वाग्रहों से मुक्त नही हो पाया है। वह स्त्री को अपने अनुसार ही चलाना चाहता है। साठोत्तरी कहानी में नारी–शोषण, संघर्ष तथा विद्रोह को विशेष प्रामाणिकता के साथ प्रस्तुत किया गया है। महीप सिंह की कहानी कील, रामकुमार की–समुद्र, सुधा अरोरा की वगैर तलाशे हुए, कृष्ण बलदेव वैद्य के त्रिकोण आदि में टूटते हुए पारिवारिक सम्बन्ध तथा बदलते हुए स्त्री–पुरूष के रिश्तों का मार्मिक चित्रण मिलता है। आज व्यक्तिगत–सामाजिक सम्बन्ध अर्थ की बुनियाद पर टिके है। दाम्पत्य जीवन में विघटन की प्रक्रिया प्रबल होती जा रही है। सामाजिक आर्थिक जैसे कारणों से पति–पत्नी के बीच आत्मीयता समाप्त होती जा रही हैं। मृदुला गर्ग की कहानी वितृष्णा में पात्रों की मनः स्थिति देखने जैसी है–"दिनेश सामने रहता है तो मालती का चेहरा चेहरा नहीं रहता–सपाट पीठ बन जाता है।"[2] दोनों के बीच एक प्रकार का मौन संघर्ष है। यहीं नहीं नर–नारी के सम्बन्धों में होने वाले परिवर्तन में एक प्रधान कारण यौन समस्या भी बन चुकी है। इस सन्दर्भ में अनेक पुरूष और महिला कहानीकारों ने सशक्त कहानियाँ लिखकर परम्परागत प्रतिमानों को ध्वस्त कर दिया है। आजादी के बाद सर्वथा नये कहानीकारों में विद्रोह तथा आक्रोश की दृष्टि परिलक्षित होती है। तत्कालीन कहानियाँ आत्मोन्मुखता से हटकर जीवन से सम्बद्ध हो गयी है, जिसमें व्यक्ति जीवन की संगतियाँ, विसंगतियाँ, विद्रूपताएँ, जटिलताएं व यथार्थ परक भावानुभूति है।"[3]

आजादी के बाद की कहानियों का मुख्य लक्ष्य जीवनगत मूल्यगत संघर्षों इनकी आन्तरिक

और बाह्य दोनों तरह की चुनौतियों से रचना के प्राणों से लड़ने का सत्य हैं।"[4] आज का कहानीकार समाज के विभिन्न वर्गो का चित्रण करते समय उसके प्रतिनिधि रूप में जिन पात्रों को प्रस्तुत करता है, वे सभी प्रकार की आदर्श परक कल्पनाओं से अलग एक यथार्थ व्यक्ति है। श्री माकेण्डेय जी ने विचार व्यक्त करते हुए लिखा है कि "सवाल समय का भी नहीं, वरन उस आदमी का है, जो आज के सामाजिक आर्थिक संदर्भ की सही उपज है विचार की सही दिशा तो यह होगी कि इस सही उपज को देखकर ही संदर्भ का विश्लेषण किया जाये क्योंकि मिट्टी और पौधे के समान उपज और व्यक्ति दो भिन्न तत्व नहीं है।"[5] इसलिए साठोत्तरी कहानी में चित्रित उस सही आदमी की तलाश ही मुख्य है, जिसका विश्लेषण हमारे आज के समाज के सामने आइना बन जाये। सुरेश सिन्हा की कहानियों का मूलाधार यथार्थ है। उन्होने यथार्थ परक परिवेश में मानव मूल्यों को पहचाना है और उसे चित्रित किया है। वृहत्तर जीवन–बोध को उन्होंने यथार्थ पूर्ण किन्तु सहानुभूति परक स्पर्ष देने का प्रयत्न किया है। आधुनिक जीवन खोखला हो गया है उसमें पाखण्ड, नकलीपन और अजनबी पन आ गया है। नगरीय जीवन में एक अजीब मुर्दनी छायी हुयी है। संस्कारगत कुंठा के कारण लोग हास्यास्पद जीवन मूल्यों को पकड़े हुए हैं। इन सबको सुरेश सिन्हा ने सूक्ष्म ढंग से प्रस्तुत किया हैं। कई आवाजों के बीच 'नया जन्म' 'कुछ भरे हुए 'और' हत्यारे आदि कहानियों में उन्होंने राजनीतिक विघटन, सामाजिक संत्रास, नयी पीढ़ी की अकर्मण्यता और गैर जिम्मेदारी की भावना को अभिव्यक्ति प्रदान की है। उन्होने रूढ़ियों, परम्पराओं, अन्धविश्वासों और आडम्बरों आदि का यथार्थपरक उद्घाटन किया है।

आजादी के बाद के कहानीकारों में विशिष्ट नाम डॉ0 काशीनाथ सिंह का आता है। उनकी कहानियों में मानवीय मूल्यों की खोज के साथ–साथ आधुनिक जीवन के विभिन्न आयाम समेटे गये हैं। आजकल आदमी भीड़ में खो गया है। वह अपने निजत्व की पहचान नहीं कर पा रहा है। नशाबाजी, हत्या, लूट–पाट, भ्रष्टाचार जैसे अन्य अपराध दिन–प्रति दिन बढ़ते ही जा रहे है। काशीनाथ सिंह की 'दलदल' का नायक बीस वर्ष की लम्बी अवधि शहर में बिताकर भी वहां का नहीं हो पाया है। शहर में रहते हुए भी वह अपनी कोई न कोई पहचान कायम रखने के लिए संघर्ष करता रहा–"बीस साल हुए जब मैंने अपना गाँव, अपनी जमीन छोड़ी थी। तब से लगातार यह शहर मुझे तोड़ने जप्त कर लेने की फिराक में रहा है और मैं उसके खिलाफ अपनी सुरक्षा की लड़ाई लड़ता रहा हूँ। मैंने कोशिश की थी कि अपने गंवार पैरों के नीचे सात नम्बर के जूतों के बराबर कोई ऐसा टुकड़ा बना सकूं जो दलदल न हो, जो मुझे आश्वस्त कर सके, जिससे नीयत खराब न हो।"6 'संकट','कस्बा','लंगर और साहब की पत्नी', 'सुख', 'आदमी का आदमी' आदि कहानियों में आधुनिक जीवन की विभिन्न विडम्बनाओं का चित्रण है।

आज का जीवन भाग दौड़ से भरा है। औद्योगिकी तकनीकी और वैज्ञानिक प्रगति के कारण आदमी को फुर्सत ही नहीं है। दूसरों के बारे में सोचने के लिए लोगों के पास समय ही नहीं है। सब एक दूसरे से अपरिचित हैं। पुराने मूल्य लगभग टूट चुके हैं और नये स्थापित होने बाकी हैं। अजीब दुबिधा में आज का आदमी फंसा है। चाहे वह गाँव का हो या शहर का। चारों तरफ तनाव, कुंठा, संत्रास और अजनबी पन है। महानगरीय सभ्यता में जीवन मूल्य तथा नैतिकता का जितना ह्रास हुआ है उतना अन्य क्षेत्रों में कम है। कस्बों तथा गाँवों से आये लोग रोजी–रोटी व शहरी चकाचौध में अपनी सभ्यता और संस्कृति से धीरे–धीरे दूर होने लगे हैं। पुलिस, संसद, विधान सभा, कार्यालय, कल–कारखानें आदि सभी भ्रष्ट व्यक्तियों के चरागह बन गये हैं। इन कहानियों में पूरी व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार, पक्षपात रिस्वतखोरी आदि के कारण पीड़ित और असंतुष्ट

व्यक्ति का चित्रण मिलता है। युवावर्ग इस व्यवस्था के बदलने की आकांक्षा रखता है लेकिन इस व्यवस्था को अकेले बदला नहीं जा सकता। दिनेश पालीवाल की कहानी 'एक चालू आदमी' का रामदीन व्यवस्था में बदलाव की आवश्यकता तो महसूस करता है, लेकिन उसे अपनी सीमाओं का भी ज्ञान है– "इस दैत्याकार व्यवस्था को वह अकेला कैसे बदल सकता है। आवश्यकता कैसे भी तो नहीं। वह तो अपनी व्यवस्था नही बदल पाया इस दैत्याकार व्यवस्था को क्या खाकर बदलेगा।"7

सामाजिक व्यवस्था की विसंगतियों को उभारने के साथ–साथ इसके बदलाव की अनिवार्यता को अहसास कराने वाली कहानियों की रचना मधुकर सिंह, जितेन्द्र भाटिया, सुरेन्द्र कुमार, काशी नाथ सिंह जैसे आदि कहानिकारों ने की है। जिसमें यह सांकेतिक किया गया है कि इस दैत्याकार व्यवस्था के बदलाव के लिए 'एकला चलोरे' ही प्रवृत्ति की काफी नहीं हैं, अपितु अन्याय का सामूहिक प्रतिरोध आज की अनिवार्यता है। समकालीन कहानीकार व्यवस्था के प्रति आक्रोश व्यक्त करने के साथ–साथ ऐसे संघर्षशील, ईमानदार छवि को भी चित्रित करते हैं जो इस व्यवस्था के खिलाफ आजीवन संघर्ष करते रहते हैं। भले ही हमारे समाज में ऐसे चरित्रों की संख्या कम है, लेकिन यह भी सच है कि युवाओं का एक वर्ग ऐसा भी है जो अपनी शक्ति प्रतिभा और सामर्थ्य का गलत, असंगत और विनाशकारी प्रयोग न करके रचनात्मक कार्यों में प्रयोग कर रहा है।

इस प्रकार आजादी के बाद के कथाकारों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से जीवन के नये रास्ते तलाशे, प्रचलित अनेक कुप्रथाओं तथा कुरीतियों में परिष्कृत किया और नये आयामों को साथ नया शिल्प दिया। नयी पीढ़ी के लेखकों ने सचेतन और गतिशील मनन चिन्तन के साथ राजनीतिक, सामाजिक आर्थिक तथा सांस्कृतिक व धार्मिक पक्षों पर विचार कर समाजिक परिवर्तन की समाजशास्त्रीय विश्लेषण किया। इन रचनाओं में नयी स्थापनाएं नये नैतिक प्रतिमानों के साथ व्यक्ति और समाज में तादात्म्य नये रूप से किया। वैज्ञानिक तथा औद्योगिक प्रगति के जीवन में जरूरत की वस्तुओं की प्राप्ति के लिए मनुष्य को कितना संघर्ष करना पड़ रहा है। इन रचनाओं में जीवन सत्य तथा रचना के मध्य सामंजस्य है। इस दृष्टि से विभिन्न स्तरों पर होने वाले सामाजिक परिवर्तनों को समाजशास्त्रीय ढंग से विश्लेषण कर प्रस्तुत करने वाले माध्यम में रचनाओं को प्रतिनिधि माना गया हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. मेरी प्रिय कहानियाँ–मन्नू भण्डारी, पृ0 127
2. उर्फ सैम–मृदुला गर्ग– पृ0 81
3. साठोत्तरी हिन्दी कहानी : मूल्यों की तलाश – डॉ0 वासुदेव शर्मा– पृ0 25
4. साठोत्तरी कहानी में मानवीय मूल्य–विनीता अरोरा, पृ0 164
5. साठोत्तरी कहानी में मानवीय मूल्य–विनीता अरोरा, पृ0 23
6. सुबह का डर 'दलदल' काशीनाथ चेतना–डॉ0 किरण बाला, पृ0 144
7. हिन्दी कहानी : एक अन्तर्यात्रा–डॉ0 वेद प्रकाश अमिताभ, पृ0 64

अन्य सन्दर्भ

- आठवें दशक के हिन्दी उपन्यास : प्रवृत्तिमूलक अध्ययन–डॉ0 जैन रजनीकांत–प्रकाशन–दिगदर्शक जैन ,दरिया गंज नई दिल्ली, संस्करण 1988

- साठोत्तरी कहानी और परिवर्तित मूल्य–लेखक–डॉ0 सिंह श्रीमती प्रेम–प्रकाशक–राजसूर्य गावंडी विस्तार ,भजनपुरा, दिल्ली
- हिन्दी के समकालीन महिला उपन्यासकार–लेखक डॉ0 वेंकेटेश्वर एम–अन्नपूर्णा प्रकाशन ,कानपुर, सं. 2002
- हिन्दी उपन्यास–डॉ0 तिवारी रामचन्द –विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी, सं.–2006।
- हिन्दी के समकालीन महिला उपन्यासकार –लेखक,डॉ0 वेंकेटेश्वर एम–अन्नपूर्णा प्रकाशन,कानपुर,सं. 2002
- हिन्दी उपन्यास का उद्भव और विकास–शास्त्री उमेश, देवनागर प्रकाशन चौड़ा रास्ता ,जयपुर, सं. –1986
- आधुनिक हिन्दी उपन्यास–डॉ0 इन्द्रनाथ मदान राजकमल प्रकाशन,नई दिल्ली, सं. 1980

Copyright © 2017, Jagpal Singh Yadav. This is an open access refereed article distributed under the creative common attribution license which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.